आखिरी अंक

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

पृष्ठ २०
दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई अंक ५२

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २५ फरवरी, १९५६

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

ग्राहकोंसे

पाठकोंको ता० १८-२-'५६ के अंकसे यह मालूम हो चुका होगा कि नवजीवन ट्रस्टने तीनों 'हरिजन' पत्रोंका प्रकाशन अुनके नये सालसे यानी मार्च १९५६ से बन्द करनेका निर्णय किया है। अिसलिअे ग्राहकोंको अपना बाकी चन्दा वापिस लेनेका अधिकार होगा। यथासंभव जल्दी ही ग्राहकोंको व्यक्तिगत रूपमें यह सूचना की जायगी कि अुनकी कितनी रकम बाकी है।

हमारी प्रार्थना है कि ग्राहक बाकी चन्दा वापिस लेनेके संबंधमें नीचे बताये गये तीन रास्तोंमें से अेक रास्ता पसन्द करें और अुसके मुताबिक हमें सूचना कर दें।

१. बाकी चन्दा 'लोकजीवन' (पाक्षिक) या 'शिक्षण अने साहित्य' (मासिक) के खातेमें बदलना। ये दोनों पत्र गुजराती भाषाके हैं।

'लोकजीवन' का वार्षिक चन्दा ३ रुपये और 'शिक्षण अने साहित्य' का वार्षिक चन्दा ४ रुपये है।

२. बाकी चन्देके मूल्यकी नवजीवन ट्रस्टकी पुस्तकें मंगाना। (डाकखर्च नहीं लगेगा) ग्राहक अुस सूचीपत्रमें से अपनी पसन्दकी पुस्तकें चुन सकते हैं, जो अुन्हें बाकी चन्देकी सूचनाके साथ अलग डाकसे भेजा जायगा।

३. मनीआर्डरसे बाकी रकम वापिस मंगाना।

ग्राहकोंकी तरफसे मिलनेवाली सूचनाओंके लिअे हम अप्रैल १९५६ के अन्त तक प्रतीक्षा करेंगे। जिनकी तरफसे अिस अर्सेमें कोअी सूचना हमें नहीं मिलेगी, अुनके चन्देकी बाकी रकम अूपर बताये गये तीन रास्तोंमें से पहले खातेमें जमा कर दी जायगी।

२०-२-'५६ जीवणजी डा० देसाअी
व्यवस्थापक-ट्रस्टी

आचार्य नरेन्द्रदेवजी

आचार्य नरेन्द्रदेवजीके अवसानके समाचार जानकर बड़ा दुःख हुआ। वैसे तो वर्षोंसे वे दमेके रोगसे पीड़ित थे। पर पिछले कुछ समयसे यह पीड़ा बढ़ गअी थी। अुसके अिलाजके लिअे वे दक्षिणमें गये थे और वहीं अुन्होंने देह छोड़ी।

अेक तरहसे कहूं तो आचार्यजी राष्ट्रीय शिक्षाके क्षेत्रमें मेरे अेक आदरणीय बुजुर्ग और साथी थे। वे काशी-विद्यापीठके आचार्य थे। और अुस स्थानको अुन्होंने वर्षों तक सुशोभित किया। कुछ लोगोंको याद होगा कि १९२८ में गूजरात विद्यापीठके पदवीदान-समारंभके मौके पर वे प्रमुख व्याख्याताके रूपमें यहां पधारे थे। देशकी राष्ट्रीय शिक्षाके निर्माणमें अुनका कीमती हाथ रहा है।

वे स्वभाव और वृत्तिसे शिक्षणकार और विद्याप्रेमी देशभक्त थे। प्राचीन भारतका अुन्होंने गहरा अध्ययन किया था। देशप्रेमकी वजहसे ही वे १९२० में स्वराज्यकी लड़ाअीमें शरीक हुअे और आजीवन अुसमें लगे रहे। अुत्तर प्रदेशकी कांग्रेसके कामकाजमें भी अुन्होंने सफल भाग लिया था।

१९३०-३४ के अर्सेमें अनेक शक्तिशाली सेवकोंके विचारोंमें परिवर्तन हुआ। अुनमें आचार्यजी भी थे। वे समाजवादके तत्त्व-ज्ञानकी ओर मुड़े और अुसके अुत्कर्षमें सक्रिय भाग लेने लगे। अुसीके फलस्वरूप १९४८ में वे समाजवादी पक्षके नेता और अध्यक्ष बने। पिछले महीने दक्षिणमें समाजवादी पक्षका जो सम्मेलन हुआ, अुसमें बीमार होनेके कारण वे अधिक प्रत्यक्ष भाग नहीं ले सके, परंतु यथासंभव सक्रिय भाग लेकर अुन्होंने सम्मेलनकी चर्चाओं और कार्रवाअीका मार्गदर्शन किया था। अुसके कुछ ही दिन बाद ६६ वर्षकी आयुमें अुन्होंने देह छोड़ी। स्वराज्यकी लड़ाअीके अिस विद्याप्रेमी देशभक्तको मैं अपनी कृतज्ञतापूर्ण श्रद्धांजलि अर्पण करता हूं। प्रभु अुनकी आत्माको शांति प्रदान करे!

२१-२-'५६ मगनभाई देसाई
(गुजरातीसे)

अहिंसक समाजवादकी ओर

लेखक : गांधीजी; संपा० भारतन् कुमारप्पा

कीमत २-०-० डाकखर्च ०-१२-०

गांधी और साम्यवाद

[श्री विनोबाकी भूमिकाके साथ]

लेखक : किशोरलाल मशरूवाला

कीमत १-४-० डाकखर्च ०-५-०

सच्ची शिक्षा

लेखक : गांधीजी; अनु० रामनारायण चौधरी

कीमत २-८-० डाकखर्च १-०-०

शिक्षाकी समस्या

लेखक : गांधीजी; अनु० रामनारायण चौधरी

कीमत ३-०-० डाकखर्च १-२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-१४

www.vinoba.in

भारतका विश्वकार्य

[ता० ३०-१-'५६ को पोचमपल्ली (हैदराबाद) में दिये गये प्रार्थना-प्रवचनसे।]

मेरे भाअियो, आजकी यह अजीब सभा है। आज महात्मा गांधीका प्रयाण-दिन है। यह दिन हमारे लिअे व्याख्यानका दिन नहीं है। यह हमारे लिअे अंदर गोता लगानेका दिन है। और हम कुछ अैसी ही भावनासे बोल रहे हैं मानो अंदरसे बापूसे बातें कर रहे हैं।

आप यह क्या देख रहे हैं? अिस सभामें आपके बड़े-बड़े मंत्री और दूसरे सर्वसामान्य लोग धूलमें बैठे हुअे हैं। यह महात्मा गांधीकी महिमा है। पहिले किसी युगमें यह अनुभव लोगोंको नहीं आया। यह अुन्हींकी सिखावन है जिसके कारण हम अपनेको सेवक समझते हैं। हममें जो बड़े हैं वे भी अपनेको सेवक मानते हैं। शुरूमें कुछ गलतियां होती हैं—त्रुटियां होती हैं, लेकिन हमारा दावा सेवकका है।

गांधीजीके बारेमें कुछ बोलना बहुत ही कठिन है। वह कोशिश भी मैं नहीं करूंगा। अुनके साथ काम करनेका, अुनके आश्रयमें जिन्दगी बितानेका हमको परम भाग्य हासिल हुआ है। भगवान शंकराचार्यका वाक्य हमको हमेशा याद आता है। अुन्होंने कहा है कि मनुष्यके परमभाग्य तीन होते हैं। प्रथम भाग्य तो यह है कि नरदेह प्राप्त हुआ है। दूसरा भाग्य है मुमुक्षुत्व—मुक्तिकी छट-पटाहट और तीसरा भाग्य है किसी महापुरुषके आश्रयका लाभ। 'मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः'। हमें महापुरुषके आश्रयका लाभ हुआ यह हमारा भाग्य है। भाअियो, यह स्मरण हमको जब तक रहेगा तब तक हमारी अवनति कभी नहीं हो सकती है। अिसलिअे आजके दिन हम जरा अपना आत्म-परीक्षण कर लेते हैं।

हमारी आत्मा कहती है कि जो राह गांधीजीने दिखाअी अुस पर चलनेकी हमने सोलह आने कोशिश की। हमने प्रयत्नोंकी पराकाष्ठा की। फिर भी हम जाहिर करना चाहते हैं कि हम यशस्वी नहीं हो रहे हैं—हमारी बहुत बुरी हार हुअी है।

भूदानको हमने शांतिका अेक साधन माना था। जिन प्रदेशोंमें हमको काफी जमीन मिली है वहां भी आज अशान्तिका राज है। लोगोंमें हिंसा फैली हुअी है। अितनी कटुता फैली है कि हमको अुसका अंदाज २ साल पहले नहीं था। लाखों अेकड़ जमीन बिहारमें मिली है। लेकिन बिहारमें अहिंसा फैल नहीं सकी। हिंसाकी भावना मौजूद है। हमको सैकड़ों ग्रामदान अुड़ीसामें मिले हैं। लेकिन वहां पर भी छोटी-छोटी चीजोंके वास्ते गोलियां चलीं। देशके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें अैसी बुरी घटनायें हुअी हैं।

अिसका कारण भी हम जानते हैं। भूदानका असर ग्रामों पर हुआ है। लेकिन हम कबूल करना चाहते हैं कि शहरों पर हम असर नहीं डाल सके। आज तो यह भाषानुसार प्रान्तरचनाका अेक निमित्त पैदा हुआ है। लेकिन हृदयोंमें हिंसा भरी है जो किसी भी निमित्तसे बाहर आती है। कहीं विद्यार्थियोंका या मजदूरोंका सवाल होता है तो अुसमें भी हिंसा होती है। जैसे पानीमें कीचड़ होता है तो जरा पांव अंदर डालनेसे वह फौरन बाहर आता है।

हम नहीं समझते कि भाषानुसार प्रान्त बनानेमें कोअी गलती हो रही है, जिसके कारण यह सब हो रहा है। यह तो हृदयमें जो हिंसाके भाव पड़े हैं अुनको कोअी निमित्त मिलता है तो वे फौरन बाहर आते हैं। ट्रेनों पर हमला करते हैं, टेलीग्राफके वायर पर हमला करते हैं। हमारी समझमें नहीं आता कि अिससे क्या बनता है।

हम जरा सोचते हैं तो मालूम होता है कि ४२ के आन्दोलनका परिणाम हुआ है। बहुतोंको यह मालूम नहीं कि अहिंसाके कारण हमें स्वराज्य मिला है। बहुतोंको मनमें लगता है कि हमको स्वराज्य जो मिला है वह १९४२ में जो हुल्लड़बाजी, हिंसा हुअी अुससे मिला है। अगर हमें अपनी अंतरात्मामें अहिंसाकी शक्तिका कुछ अनुभव होता, तो स्वराज्यके बाद फौरन बुरे काम नहीं हो पाते। हिंदू-मुसलमान-सिखोंके बीच जो बहुत बुरे व्यवहार हुअे, जिनका अुच्चारण करनेसे शरम मालूम होती है, वे सब नहीं होते। आज फिरसे वही वृत्ति प्रकट हो रही है। तो हमारे देशकी राष्ट्रीयता आज खतरेमें है। हमारे नागरिक अपनेको भारतके नागरिक महसूस नहीं कर रहे हैं। वे अपनेको छोटे-छोटे प्रान्तों और प्रदेशोंके नागरिक महसूस करते हैं। आज वह गांव अिस प्रान्तमें करना या अुस प्रान्तमें अैसे मसले लेकर दंगे होते हैं।

भूदानमें लाखों अेकड़ जमीन मिली है, अिसलिअे हम भूदानको यशस्वी हुआ माननेको तैयार नहीं हैं। अगर यह अनुभव होता कि भूदानके परिणामस्वरूप लोगोंके हृदयमें अहिंसामें विश्वास बैठा है तो हम अुस प्रयोगको यशस्वी समझते। हमारे सब भाअी अिस बातके लिअे जरा चिन्तन करें। बहुत सोचनेकी बात है। हमने विश्वशांतिकी आवाज अुठाअी है। पं० नेहरूने अुसकी आवाज सारी दुनियामें बुलन्द की है। हमने जाहिर किया है कि भूदानमें जो अेक अेक दानपत्र मिलता है वह शांतिका वोट है। अिस तरह हिन्दुस्तानमें आज विश्वशांति संगठित करनेके दो प्रयोग हो रहे हैं। आन्तर-राष्ट्रीय क्षेत्रमें शांति स्थापित करनेकी कोशिश पं० नेहरू कर रहे हैं। और देशके अंदर शांतिकी शक्ति प्रकट करनेकी कोशिश भूदान-यज्ञके जरिये हो रही है। हम समझते हैं कि जो दृश्य आज हम देशमें देखते हैं, अुससे ये दोनों प्रयोग अयशस्वी सिद्ध हुअे हैं।

आज मेरा चित्त बहुत व्यथित है। लेकिन फिर भी जिनका वरद हस्त मेरे सिर पर है अुन्होंने अेक तत्त्वज्ञान सिखाया है जिसके कारण मैं शांत रहता हूं। और जानता हूं कि केवल व्यथित होनेसे यह काम दुरुस्त नहीं होगा। हम सब भाअी जाग जायें। अैसी गलतफहमीमें, अैसे भ्रममें न रहें कि हमको स्वराज्य हासिल हुआ है तो हम सुरक्षित हैं। यह स्वराज्य क्षणभंगुर साबित हो सकता है। यह बिलकुल खतरेमें है। विश्वशांति हमसे नहीं बनेगी, अगर हमारे देशके मसले हम शांतिसे हल नहीं कर पायेंगे। अिसलिअे सब नेताओंको, सब कार्यकर्ताओंको, सब सेवकोंको निश्चय करना चाहिये कि हिन्दुस्तानमें जो भी मसले हैं अुनको हम शांतिसे ही हल करेंगे।

हमें अिस बातका भी दुःख है कि लोगोंकी तरफसे जहां हिंसा होती है, वहां सरकारकी ओरसे भी असमझसे काम होता है। खैर, अिस विषयको मैं बढ़ाना नहीं चाहता हूं। यह बहुत दुःख-जनक बात है। कुल मिलाकर अपराध किसका है अिसका हम विश्लेषण नहीं करते। हमने कह दिया है कि यह अपराध भूदान-यज्ञका है। अिसके लिअे हम अपनेको गुनहगार समझते हैं। कहीं न कहीं हमसे गलती हुअी है, त्रुटि हुअी है, अिसलिअे यह वातावरण फैला है, जो नहीं फैलना चाहिये था। हम भगवानसे प्रार्थना करते हैं कि हमारी वाणीमें अधिक मृदुता आये, हमारे हृदयमें अधिक प्रेमका संचार हो।

हमारे शहरवाले भाअी, हम जानते हैं, सारी दुनियाकी हवाके असरमें हैं। लेकिन हमारी आकांक्षा यह है कि हम अिस देशमें अैसी हवा बनायेंगे जिसका असर सारी दुनिया पर पड़ेगा। मनु महाराजने भविष्य लिखा था कि कुल पृथ्वीके लोग अिस देशके सज्जनोंसे नीतिकी राह सीखेंगे।

"अेतद्देशप्रसूतस्य सकाशाद् अग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवाः।"

कितना अुज्ज्वल है हिन्दुस्तानका अितिहास! यहां वैदिक संस्कृति फली-फूली। जैन और बौद्धोंने यहां पर अुत्तमसे अुत्तम

www.vinoba.in

विचार प्रकट किये। मुसलमानोंका राज यहां आया, अिसलिअे लोकशाहीका विचार फैला। अीसाअी धर्मके परिणामस्वरूप हिन्दुस्तानमें सेवाकी वृत्ति और मिठास पैदा हुअी। अिस तरहसे दुनियाभरकी माधुरीका संमेलन यहां हुआ है और अुसीके आधार पर सारी दुनिया हिन्दुस्तानसे आशा रखती है। और हम समझते हैं कि थोड़ासा अच्छा काम भूदानका हुआ है, वह अुसीके कारण हुआ है, अिसमें कोअी संदेह नहीं। लेकिन वह नाकाफी साबित हुआ है। अिस वास्ते हम चित्तका संशोधन करना चाहते हैं। हम महात्मा गांधीका स्मरण करके परमेश्वरके सामने प्रतिज्ञा करते हैं कि दिन-ब-दिन हम आत्म-परीक्षण करते रहेंगे। हम चाहते हैं कि हमारे सारे भाअी भेदभावोंको भूल जायं। ये पुराने भेदभाव हमको कुछ तकलीफ नहीं देते हैं। वे तो टूट रहे हैं। ये धर्मके झगड़े चलनेवाले नहीं हैं। जाति-भेद टिकनेवाले नहीं हैं। जमाना अुनके विरुद्ध है। तो अुन पुराने भेदोंकी हमें चिन्ता नहीं है। लेकिन आज हिन्दुस्तानमें जो नये भेद पैदा हो रहे हैं, अुनकी हमें चिन्ता है।

आज सारा देश दरिद्री है, गरीब है, अशिक्षित है। अिस हालतमें जितने भी सेवक हैं, अुन सबकी ताकत लोगोंकी सेवामें लगनी चाहिये। लेकिन वे सेवक अेक-दूसरेके साथ मिलजुल नहीं रहे हैं और अुसका कारण है पार्टीभेद। और अेक अिलेक्शनका तरीका जो हमने पश्चिमसे लिया है, अुसके कारण गांव-गांवमें और शहर शहरमें हृदयोंके टुकड़े हुअे हैं। आज लोगोंकी शक्तियां टकरा रही हैं। अुनका योग नहीं हो रहा है। आज बहुत शक्तियां देशमें हैं। लेकिन ये शक्तियां जब परस्पर टकराती हैं तो अुनका क्षय होता है।

अिन सब भेदोंको खतम करनेका यह अुपाय है कि हमारा सारा हृदय हम जरा विशाल बनायें और दृष्टि व्यापक करें। और जरा देखें कि दुनियामें क्या तमाशा हो रहा है। 'अेटमिक अेज' आ रहा है। स्पष्ट है कि नयी शक्ति निर्माण हो रही है। वह सारी दुनियाका खात्मा कर सकती है। अुसका समुचित अुपयोग अगर हम करते हैं तो सारी दुनियाको स्वर्ग बनाया जा सकता है, नहीं तो साफ है कि मानव-जातिका खात्मा हो सकता है। जहां सारी मानव-जातिके सिर पर अैसे खतरे लटके हुअे हैं, वहां हम छोटी-छोटी चीजोंमें क्या पड़ें?

अब वह बेलगांव है। वहांके लोग कहते हैं कि यहां मराठी-भाषी लोग अधिक हैं अिसलिअे अिसकी गिनती कर्नाटकमें नहीं होनी चाहिये। हम कबूल करते हैं कि अेक भाषाके बहुतसे लोग अेक प्रान्तमें आ जाते हैं तो राज्यकारोबार चलानेके लिअे बड़ी सहूलियत होती है। परंतु क्या निचोड़कर अेक भाषाके लोगोंको अेक प्रान्तमें लाया जाय तो कल्याण होगा? कुछ थोड़ेसे लोग दूसरे प्रान्तमें रहते हैं तो दोनों प्रान्तोंमें प्रेम बढ़ता है। दोनों भाषाओंका अध्ययन चलता है। और सीमा प्रदेशके लोग तो दोनों भाषा जानते हैं, चाहे अुनकी मातृभाषा कोअी भी हो। फिर अैसी छोटी-छोटी चीजोंका आग्रह क्यों रखा जाता है, हमारी समझमें नहीं आता है। हमारी समझमें नहीं आ रहा है कि कुल दुनिया कितनी खतरेमें है, अिसका भान कैसे नहीं हो रहा है? काश्मीरका मसला वैसा ही जलता हुआ है। गोआका प्रश्न हल ही नहीं हुआ है। फार्मोसा जलता है। अभी कोरिया शान्त नहीं हुआ है। अिन्डो-चायना सुलग ही रहा है। 'मिडल अीस्ट' के झगड़े कायम हैं। अब यह सारा देखो — क्या हो रहा है। अुस सबको अगर हम नहीं रोकते हैं, तो हम खतरेमें हैं और दुनिया भी खतरेमें है। अिस हालतमें हमारी जो बात थी, वह हमने लोगोंके सामने रखी और फिर जो फैसला हुआ अुसे मान लिया तो हम बुद्धिमान साबित होंगे। आज तो छोटे-छोटे चुनावोंके लिअे भी आपस-आपसमें कितना मत्सर चलता है!

फिर भी हम निराश नहीं हैं। निराश होनेका कोअी कारण नहीं है। बल्कि हमारा स्वभाव ही निराशाके विरुद्ध है। बाहर जितना अंधकार बढ़ता है अुतना हमारा अुत्साह बढ़ता है। अंधकारको देखकर हमें खुशी होती है कि हमारा छोटासा दीपक भी मार्गदर्शन करेगा। अिसलिअे हम निराश नहीं हैं। महात्मा गांधीकी आत्मा हमारी तरफ देख रही है। अीश्वर भी हमारी तरफ देख रहा है।

दो बातें ध्यानमें रखनी हैं। १. भारतमें नयी जागृति हुअी है। भारतकी आजादी भी अेक विशेष तरीकेसे हासिल हुअी है। चाहे वह हमारा प्रयत्न टूटा-फूटा क्यों न हो, फिर भी अेक विशेष प्रयत्न था। २. अिस भारतमें दो बातोंका संगम हुआ है। आत्म-ज्ञानका प्रवाह तो भारतमें है ही और दूसरा विज्ञानका प्रवाह यहां आकर मिल रहा है। पश्चिममें तो अेक विज्ञानका ही प्रवाह दिख रहा है। लेकिन यहां पर दोनों हैं अिसलिअे हम समझते हैं कि आत्म-ज्ञान और विज्ञानके योगसे भारत यशस्वी होगा।

आज दोनों मिलकर चित्त पर हमला कर रहे हैं। विज्ञान मनको महत्त्व नहीं देता है। विज्ञान प्रत्यक्ष स्थितिको — सृष्टिको — 'ऑब्जेक्टिव्ह ट्रुथ' को — महत्त्व देता है। आत्म-ज्ञान मनको महत्त्व नहीं देता है। वह कहता है कि मन तो विकारोंसे भरा हुआ है। हम अुसके साक्षी हैं — अुससे अलग हैं। जैसे हम अिस घड़ीसे अलग हैं, अुसमें कोअी दोष हो तो देख सकते हैं और दुरुस्त कर सकते हैं, वैसे ही हमारे मनमें अगर कोअी त्रुटि है तो अुसको देखकर हम अुसको दुरुस्त कर सकते हैं। यह घड़ी रोज दो मिनिट पीछे पड़ती है, तो हम रोज दो मिनट सोनेके वक्त आगे कर देते हैं। अिस तरह हम अपने मनके दोष देख सकते हैं और अुनमें बदल कर सकते हैं। हमें मनके वश नहीं होना चाहिये। मनका साक्षी होकर रहना चाहिये। यह आत्म-ज्ञानकी सिखावन है।

आज विज्ञान भी यही कहता है कि बाहरकी वस्तुका, स्थितिका विचार करो। मानसिक भावना, कल्पनाकी ओर मत देखो। आज विज्ञान और आत्म-ज्ञान दोनोंके ही हमले मन पर हो रहे हैं। अिसलिअे जो मनके अूपर अुठेंगे वे दुनियाको जीतेंगे। मानसिक भूमिकामें रहकर काम करनेके दिन लद गये। मान-अपमान, राग-द्वेष आदि सब मनके होते हैं। और अुन्हींके आधार पर राजनीति आदिका काम चलता है। अिसके आगे वह नहीं चल सकेगा। अब विज्ञान और आत्म-ज्ञानको देखकर काम करना होगा और मनको शून्य बनाना होगा।

यह सब प्रक्रिया भारतमें होगी अैसा हमारा विश्वास है। आज युरोप और अमरीकाका दिमाग थक गया है। वे खूब शस्त्रास्त्र संभार पैदा कर चुके हैं। अुससे कुछ बनता नहीं। लेकिन अुसके बिना काम कैसे चलेगा, यह भी ध्यानमें नहीं आ रहा है। अिस समय युरोप और अमरीकाकी बड़ी दयनीय स्थिति है। हिंसा परसे अुनका विश्वास अुड़ गया है और अहिंसा पर अुनका विश्वास अभी बैठा नहीं है। अैसी बीचकी स्थितिमें वे हैं। अुनकी बुद्धि थक गयी है। वे बहुत सोच-सोचकर थक गये हैं। अिस वक्त जो लोग अपने दिमाग स्थिर रखेंगे, वे ही बच सकेंगे और दुनियाको भी बचायेंगे।

हिन्दुस्तानमें विज्ञान और आत्म-ज्ञानका संयोग हो रहा है, अिसलिअे हमारे मनमें विश्वास है कि भगवान भारतके जरिये दुनियामें शांतिकी स्थापना करना चाहता है। हमें स्वराज्य हासिल हो चुका है तो अब क्या करना चाहिये? लोग अेक गीत गाया करते हैं: 'विश्व-विजय करके दिखलावें, तब होवे प्रण पूर्ण हमारा।' क्या हम विश्वको गुलाम बनाना चाहते हैं? नहीं, हम दुनिया पर राज्य नहीं चलाना चाहते, बल्कि भारतका जो विचार है अुसे फैलाना चाहते हैं। स्वराज्यका अुपयोग अिसलिअे नहीं

www.vinoba.in

करना चाहिये कि बेलगांव किस प्रांतमें रहेगा। स्वराज्यका अुपयोग अिस बातके लिअे करना चाहिये कि हम किस तरह रूस और अमरीकाको मित्र बना सकते हैं। किस तरह शेरोंको और गायोंको अेक झरने पर पानी पिला सकते हैं। अितना बड़ा विशाल कार्य हमें करना है।

विनोबा

हरिजनसेवक

२५ फरवरी १९५६

आखिरी अंक

पिछले अंकमें मैं बता चुका हूं कि अिन अैतिहासिक पत्रोंको बन्द करनेका निर्णय किन परिस्थितियोंमें ट्रस्टको लेना पड़ा है। अच्छी और अुसमें भी गौरवपूर्ण अितिहासवाली किसी वस्तुका जब अन्त आता है, तब स्वभावतः सबको दुःख होता ही है। यह बात अिन पत्रोंको भी लागू होती है। फिर भी मैं मानता हूं कि तीनेक साल पहले अुन्हें बन्द करनेकी बात खड़ी हुअी थी, अुस समय अैसे निर्णयसे सबको जो दुःख होता वह आज नहीं होगा; क्योंकि सारे पहलुओंसे विचार करने पर अैसा लगता है कि अिन पत्रोंको बन्द करनेका समय आ पहुंचा था। अैसी मान्यता होनेके कारण मुझे लगता है कि ट्रस्टियोंने जो निर्णय किया है वह सामयिक है।

अिन पत्रोंने हमारे अर्वाचीन अितिहासके गांधीयुगकी रचनामें अमूल्य हिस्सा लिया है। अिसीके लिअे अिनका अुदय हुआ था। सन् १९१९-२० में गांधीजीने 'यंग अिंडिया' और 'नवजीवन' पत्र शुरू किये थे। कुछ समय बाद अुनका हिन्दी संस्करण 'हिन्दी नवजीवन' निकाला था। अिस प्रकार अिन पत्रोंका पूर्वजन्म आरंभ हुआ था।

सन् १९३०-३२ के समयमें अुनका अन्त आ गया। अिसके कारण ब्रिटिश सरकारके साथ अुस वक्त चल रही हमारी आजादीकी लड़ाअीमें निहित थे। अुन्हीं कारणोंसे १९३३ में गांधीजीने जेलमें अस्पृश्यता-निवारणके संबंधमें अुपवास शुरू किया था। अुस निमित्तसे ये तीनों पत्र 'हरिजन' के नये नामसे फिर शुरू हुअे और तबसे लेकर स्वराज्य-प्राप्ति तक वे हमारे अितिहासके साक्षी और समर्थ मुखपत्र रहे।

सन् १९४८ में गांधीजीके अवसानके बाद कुछ लोगोंको लगा था कि गांधीजीके शरीरके साथ अुनकी वाणी भी चली गअी, अिसलिअे अुचित यही होगा कि अुनके वाणीरूप ये पत्र भी बन्द हो जायं। अिस खयालसे तीनों पत्र बन्द कर दिये गये थे। परंतु अिसके खिलाफ अितना ही बलवान अेक दूसरा विचार भी था — और नवजीवनके ट्रस्टी अुसे मानते थे; वह यह कि स्वराज्यके अुदयके नवयुगमें गांधीजीके विचारोंको ध्यानमें रखकर देशके नये कार्योंके संबंधमें विवेचन और मार्गदर्शन होना अभी जरूरी है। अिस विचारसे ये तीनों पत्र अप्रैल १९४८ में फिर शुरू किये गये। स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाने अिनके संपादनकी जिम्मेदारी लेनेकी तैयारी बताअी।

अुसके बादकी अिन पत्रोंकी यात्राका सबको ताजा स्मरण है। अुनकी अिस नअी मंजिलमें बड़ा फर्क तो यह हुआ कि स्वराज्य-प्राप्तिके बाद आजादीकी लड़ाअीकी आंधीकी गतिसे चलनेका नहीं, बल्कि रचनात्मक कार्योंकी शिथिल और धीमी गतिसे चलनेका युग शुरू हुआ। अिसलिअे यह कहा जा सकता है कि १९४८ के बाद अिन पत्रोंने नये युगमें प्रवेश किया। बेशक, वे साक्षात् 'गांधीजीकी वाणी' तो नहीं रहे। फिर भी वे गांधीजीके ही पत्र थे; और अुस रूपमें अुनसे यह आशा रखी जाती थी कि वे वर्तमानकी समीक्षा करते रहें। और यह ठीक भी था, क्योंकि गांधीजीका कार्य देशको केवल राजनीतिक स्वराज्य दिलानेका नहीं था; अुनका ध्येय तो सच्चे स्वराज्य, रामराज्य अथवा सर्वोदयकी स्थापना करनेका था।

नये युगमें और गांधीजीके जानेके बाद यह कार्य पहलेके जमानेके कार्यसे ज्यादा कठिन बन गया, क्योंकि अुसे करनेके मार्गोंमें पद-पद पर मतमतांतर और आदर्श तथा दृष्टिके भेद खड़े होने लगे। स्वराज्य-प्राप्तिके बाद कुछ मास गांधीजी जीवित रहे, अुस बीच भी यह साफ दिखाअी देने लगा था। अुनके अवसानके बाद यह चीज अधिकाधिक स्पष्ट मालूम होती रही है।

यह स्पष्टता आज और भी साफ मालूम होने लगी है; और यदि मैं यह कहूं कि भारतके गांधीयुगका अितिहास अब अुसके नये जवाहर-युगमें प्रवेश करता है तो पाठक मेरे साथ सहमत होंगे। ये पत्र अैसे समय बन्द हो रहे हैं, अिसमें मैं अितिहासकी नियति देखता हूं। दिनोंदिन घटती जा रही ग्राहक-संख्या और बढ़ता जा रहा घाटा अिसके चिह्न माने जायंगे।

ये चिह्न १९५२ के आरंभसे दिखाअी देने लगे थे। अुस साल तीनों पत्रोंकी कुल ग्राहक-संख्या घटकर ९००० तक पहुंच गअी थी। अुसके आधार पर नवजीवन ट्रस्टने अुस समय देशको चेतावनी दी थी। अुस परसे अनेक मित्रोंने ग्राहक बनानेका प्रयत्न किया, जिसके फलस्वरूप ग्राहकोंकी संख्यामें काफी सुधार हुआ। परंतु वह अुस वर्ष तक ही सीमित रहा। दूसरे वर्षसे बढ़ी हुअी संख्यामें अेकदम अुतार आया और वह जारी रहा। अितनेमें स्व० किशोरलालभाअी अचानक चल बसे और अुनका काम मेरे जैसेके कमजोर हाथोंमें आया। अिस संबंधमें मैं अितना ही कहूंगा कि मैंने यथाशक्ति पूरा प्रयत्न किया है और अिन पत्रोंकी भारी जिम्मेदारी अदा करनेके लिअे भरसक परिश्रम किया है। अुनकी ग्राहक-संख्या सुधरी नहीं, यह मेरी कमीको बतानेके लिअे काफी है।

आज अुस घटनाको साढ़े तीन साल होते हैं। मेरे जीवनके ये तीन साल नया ही अनुभव देनेवाले सिद्ध हुअे हैं। अिससे मुझे अपूर्व शिक्षा भी मिली है। व्यक्तिगत रूपमें कहूं तो यह लाभ देनेके लिअे मैं नवजीवन ट्रस्टका आभारी हूं। परंतु वैयक्तिक बात करनेके लिअे मैं यह लेख नहीं लिख रहा हूं। अिन बरसोंमें ट्रस्ट यह भी देख सका है कि ये पत्र दरअसल घाटेका कितना बोझ अुठा सकते हैं। पिछले अंकमें दिये गये आंकड़ों परसे पाठकोंने देखा होगा कि आज अुनकी कुल ग्राहक-संख्या ९२९० है। अिसलिअे अगर अिस तरह घाटा होता ही रहे, तो पत्र जारी रखनेसे कोअी फायदा नहीं होगा। और अिसलिअे अब वे बन्द होते हैं।

अूपर मैंने कहा है कि भारतमें अब जवाहर-युग शुरू होता है। मुझे भान है कि मैं यह बड़ी अर्थगंभीर बात कर रहा हूं। परंतु मैं देखता हूं कि यह सच है, अिसलिअे अुसे कहना चाहिये। पाठक अिसका अर्थ गांधीयुगका अन्त न समझें। गांधीजीकी बात तो वैसी ही कायम है। मैं मानता हूं कि भारत और अुसके द्वारा जगत अुसको टाल नहीं सकते। अर्वाचीन युगको अुसके विकसित हो रहे स्वरूप परसे अणुयुग कहा जाय, तो अुस युगके लिअे गांधीजीका संदेश है। अब तो यह कहा जा सकता है कि वह सन्देश देनेके लिअे ही अुनका अवतार हुआ था। अवतारके कार्य सफल होनेमें युगों लग जाते हैं। आज अुसका प्रथम युग शुरू हुआ है। अुसके नेता जवाहरलालजी हैं। कांग्रेस अुनका साधन बनी हुअी है। देशके समर्थसे समर्थ लोग अुसमें अुनके साथी हैं।

www.vinoba.in

वे भी गांधीजीका ही कार्य करना चाहते हैं; और अुसके लिअे जो रास्ते अुन्हें ठीक और अनुकूल मालूम होते हैं अुन्हें अपनाकर राष्ट्रके विकासकी योजनाअें वे लोग बनाते और चलाते हैं। अिसमें गांधीजीकी सीख तो सबके सामने रहती ही है। **गांधीवाद** जैसी वस्तु न तो पहले कभी थी, न आज है। अिन पत्रोंके कारण कभी अैसी गंध आनेका भय पैदा होनेकी आशंका रहती हो, तो वह भी अब दूर होती है। यह अेक तरहसे अच्छा ही माना जायगा।

अिसके बादके नवनिर्माणमें हमें क्या करना है? और क्या करना चाहिये? हृदयकी गहराअीसे निकली हुअी अिस प्रार्थनाके द्वारा गांधीजीने अिस प्रश्नका हमारे लिअे सदाका अुत्तर दे दिया है:

> "हे नम्रताके सागर, दीन भंगीकी हीन कुटियाके निवासी हे दरिद्रनारायण. . . हिन्दुस्तानकी जनतासे अेकरूप होनेकी शक्ति और अुत्कंठा हमें दे।. . ." (देखिये 'हरिजनसेवक', ता० ११-२-'५६, पृष्ठ ३९३)

भारतकी जनताकी सेवा कैसे की जाय? भारतका दरिद्र आज बेकार है। अुसे सम्मानपूर्ण काम चाहिये। तो ही वह स्वाभिमानके साथ अपनी रोटी कमा सकता है। यह काम अुसे अपने गांवकी टूटी-फूटी झोंपड़ीमें खेती और अुसके साथ अटूट संबंध रखनेवाले गृह-अुद्योगों और ग्रामोद्योगोंके जरिये मिलना चाहिये। अुसके अिन अुद्योगोंकी कदर होनी चाहिये। और राष्ट्रके पुनर्निर्माण तथा पुनरुत्थानमें अिन अुद्योगोंका जो अनोखा स्थान है अुसे स्वीकार करना चाहिये।

फिर, यह काम वह ज्ञान और समझके साथ करे तो ही अुससे लाभ होगा और तभी अुसकी शक्ति और अपार संभावनायें प्रकट हो सकेंगी। अिसके लिअे अुसे सदा ज्ञान मिलता रहना चाहिये। अिसीका दूसरा नाम बुनियादी तालीम है। अैसा होने पर ही वह स्वराज्यका स्वतंत्र नागरिक बन सकता है। अगर हम अैसा न करें, तो भारतमें लोकशाहीका जन्म कभी नहीं हो सकेगा। और अगर लोकशाहीका जन्म नहीं हुआ, तो स्वराज्य व्यर्थ सिद्ध होगा।

और आगे बढ़ें तो अिसके लिअे अुसकी लोकभाषाका आदर होना चाहिये। यह तभी हो सकता है कि जब भारतकी महान भाषाओंके जरिये अुसके प्रदेशोंका राजकाज, अदालतें, शिक्षण तथा धारासभाओं वगैराका संपूर्ण व्यवहार चले; और प्रदेशोंके आपसी व्यवहारके लिअे भारतकी महान आन्तर-भाषा हिन्दीको — न कि अंग्रेजीको — सच्चे दिलसे अपनाया जाय।

देशकी जनताके सामान्य स्वास्थ्यके लिअे अुसे ज्ञान देना चाहिये और समझके साथ मिलनेवाले अुसके सहकारके जरिये अुसके कामोंकी व्यवस्था की जानी चाहिये। लोगोंके स्वास्थ्यका, अुनकी स्वच्छताका, अुनके आहार-विहारका तथा अुनके सादे किन्तु अत्यन्त रसपूर्ण संस्कार-जीवनका विकास किया जाना चाहिये। सरकारको शराब वगैराके प्रलोभन लोगोंके सामने नहीं रखने चाहिये — शराबबंदी करनी चाहिये। अुनके गाय-बैलोंकी सच्ची सेवाके मार्ग अपनाये जाने चाहियें; और अुनके बालकोंको मुफ्त सुन्दर शिक्षा मिलनी चाहिये।

भारतके संविधानने ये सब कार्य करनेके आदेश राज्यको दिये ही हैं। अिन कार्योंके फलस्वरूप ही देश सच्चे अर्थमें अेक और शांतिपरायण बनेगा। अैसा होगा तो ही सहकारी लोकतांत्रिक राष्ट्रका हमारा ध्येय पूर्ण हो सकेगा; और अुसका असर जगतके अणुयुग पर पड़े बिना नहीं रहेगा।

ये पत्र अितनी बातें हमेशा कहते आये हैं। भारतके विकासका जवाहर-युग अिस चीजकी प्रेरणा देनेवाली और अुसका पोषण करनेवाली अेक सीढ़ी बने, अिसीमें अुसकी कृतार्थता और फलश्रुति भी मानी जायगी। कांग्रेसके लोक-सेवक-संघ बननेकी जो बात कही गअी है, अुसका प्रयोजन भी अिस प्रकारकी आशामें ही निहित है। भगवान भारतको अिस मार्ग पर चलनेकी प्रेरणा दे!

२०-२-'५६ **मगनभाई देसाई**

(गुजरातीसे)

मद्रास युनिवर्सिटीका माध्यम

मद्रास युनिवर्सिटीने राजभाषा कमीशन द्वारा निकाली हुअी प्रश्नावलीके अुत्तर प्रकाशित कर दिये, जो अुसकी सिंडिकेटने स्वीकार किये थे। अुसने अन्तमें बदलनेवाले शिक्षणके माध्यमके विषयमें जो कुछ कहा है, अुसमें से नीचेका हिस्सा यहां दिया जाता है:

> "(आज) शिक्षणका माध्यम अंग्रेजी है। अन्तमें . . . यह माध्यम मातृभाषा या प्रदेश-भाषा हो सकती है। अेक युनिवर्सिटीसे दूसरी युनिवर्सिटीमें विद्यार्थियों और प्राध्यापकोंके जाने या आनेका असर बहुत थोड़े विद्यार्थियों पर पड़ता है। और अिसके लिअे सारी युनिवर्सिटियोंमें अेक सर्वसामान्य माध्यम रखना बेकार होगा। जहां तक प्राध्यापकोंका संबंध है, प्रान्तवादने जड़ जमा ली है। बहुत कम लोगोंको शिक्षणके धंधेमें या दूसरे किसी धंधेमें देशके दूसरे प्रदेशोंमें नौकरी पानेके मौके मिल सकते हैं।"

भारतकी अेक सबसे पुरानी युनिवर्सिटीका यह अुत्तर अनेक दृष्टियोंसे महत्त्वपूर्ण है। वह अिस बातका भी द्योतक है कि दक्षिण भारतके शिक्षण-क्षेत्रमें हवा किस दिशामें बह रही है।

यह अुत्तर अिस बातको स्पष्ट कर देता है कि युनिवर्सिटी शिक्षणका माध्यम प्रदेश-भाषा होनी चाहिये। यह बिलकुल सही प्रतिपादन है, और सारी युनिवर्सिटियों तथा राज्य-सरकारोंको अिसे अेकमतसे अपनाया हुआ सिद्धान्त घोषित कर देना चाहिये। अिस प्रतिपादनकी चर्चामें राष्ट्रका बहुमूल्य समय नष्ट नहीं होने देना चाहिये; सारी दुनियाके स्वतंत्र राष्ट्रोंने अिसे स्वीकार कर लिया है।

यह अुत्तर अेक प्रकारकी हिचकिचाहट या 'धीरे-चलो' की मनोवृत्तिको भी प्रकट करता है, जो दुर्भाग्यसे आज हमारी युनिवर्सिटियोंका अेक सामान्य गुण बन गया है। अिसका मुख्य कारण अेक सदीसे भी ज्यादा अर्से तक माध्यमके रूपमें अंग्रेजीका अस्वाभाविक और राष्ट्रविरोधी अुपयोग ही है। हम मान सकते हैं कि अितने दीर्घकालके अुपयोगके बाद अैसी पुराणपंथी मनोवृत्तिका बन जाना स्वाभाविक है। लेकिन अुसे अेक प्रतिगामी सिद्धान्तका रूप नहीं लेने दिया जा सकता। अैसा भय सच्चा साबित होगा, अगर युनिवर्सिटियां अंग्रेजीका स्थान प्रदेश-भाषाओंको देनेमें प्रगतिशील और सावधान नहीं रहीं। अैसा करनेके लिअे अुन्हें हमारी शिक्षा-प्रणालीमें अिस बुनियादी और महत्त्वपूर्ण परिवर्तनकी आवश्यकताको समझना चाहिये और अुस दिशामें बढ़ना शुरू कर देना चाहिये।

कुछ लोग अिस मतके हैं कि अखिल भारतीय सर्वसामान्य भाषा हिन्दी माध्यमके तौर पर अंग्रेजीकी जगह ले सकती है। मद्रास युनिवर्सिटीका अुपरोक्त अुत्तर अिस विचारको नहीं मानता। अैसा करते हुअे वह अिस मतके लोगोंकी अेक महत्त्वपूर्ण दलील, यानी विद्यार्थियों और प्राध्यापकोंके अेक युनिवर्सिटीसे दूसरी युनिवर्सिटीमें जानेकी दलील, का अुत्तर देता है। यह अुत्तर अपने पहले भागमें तो निरपवाद है, जहां वह कहता है कि विद्यार्थियों और प्राध्यापकोंके अेक युनिवर्सिटीसे दूसरीमें जानेका "असर बहुत ही थोड़े विद्यार्थियों पर पड़ता है।" परंतु प्राध्यापकोंके बारेमें अुसने अैसा नहीं कहा है। वह कहता है कि "प्रान्तवादने जड़ जमा ली है. . .।" क्या यह सच है? अगर सच हो तो क्या वह अच्छा या वांछनीय है? क्या अैसा कुछ नहीं किया जाना चाहिये, जो अिस स्थितिको यथासंभव टालनेमें सहायक सिद्ध हो?

अिस दिशामें गुजरात युनिवर्सिटीने भारतकी युनिवर्सिटियोंका प्रशंसनीय नेतृत्व किया है। अुसने निर्णय किया है कि शिक्षणका माध्यम गुजराती होगा। फिर भी, अुसने यह विकल्प रखा है कि

www.vinoba.in

गुजराती न जाननेवाले विद्यार्थी और प्राध्यापक चाहें तो गुजरातीके बदले हिन्दीका माध्यमके रूपमें अुपयोग कर सकते हैं, और संक्रांति कालके लिअे अुसने यह व्यवस्था की है कि वे अंग्रेजीका भी अुपयोग कर सकते हैं। ध्यान देने लायक बात तो यह है कि अिस निर्णयको अमलमें लाया जा रहा है और अैसी योजना बनाअी गअी है जिससे निकट भविष्यमें ही माध्यम-परिवर्तनकी यह प्रक्रिया पूर्ण हो जायगी।

पाठक देखेंगे कि अूपरके निर्णयमें अिस तरहके स्थानान्तरकी आवश्यकतायें पूरी करनेका निश्चित प्रयत्न किया गया है। यह प्रयत्न अिस मान्यता पर आधार रखता है कि शैक्षणिक पुनर्गठनके अन्तिम स्वरूपमें युनिवर्सिटीका विद्यार्थी अपनी भाषा जानेगा, दूसरी भाषाके रूपमें हिन्दी जानेगा और तीसरी भाषाके रूपमें अंग्रेजी भी जानेगा। युनिवर्सिटियां अिस अर्थमें द्विभाषी होंगी कि माध्यमके रूपमें अपनी प्रादेशिक भाषाओंका अुपयोग करते हुअे भी प्रदेशके बाहरके विद्यार्थियों और प्राध्यापकोंको वे आन्तर-भाषा हिन्दीका अुपयोग करने देंगी, और अिस तरह अुनके स्थानान्तरको आसान बनायेंगी। हिन्दी आन्तर-युनिवर्सिटी व्यवहारकी भाषा भी रहेगी। केवल अिस तरह काम करके ही हम संकुचित प्रान्तीयतासे बच सकेंगे और शैक्षणिक और राष्ट्रीय अेकताके लिअे तथा समान प्रयत्नोंके लिअे अेक अखिल भारतीय भाषा प्राप्त कर सकेंगे। जिस तरह अहिन्दी-भाषी प्रदेशोंमें केवल हिन्दीको माध्यम बनाना गलत है और अुसे स्वीकार नहीं किया जाता, अुसी तरह केवल प्रदेश-भाषाको ही माध्यम बनाना ठीक नहीं है, सिवाय अिसके कि हम हिन्दीको अखिल भारतीय भाषाके रूपमें अस्वीकार कर दें। अैसा हम केवल संविधानके अुस भागको तोड़कर ही कर सकते हैं, जिसमें हिन्दीके लिअे व्यवस्था की गअी है। अहिन्दी-भाषी राज्यों और युनिवर्सिटियोंको अिससे सावधान रहना चाहिये। अिसमें केवल हिन्दीको ही माध्यम बनानेका मत रखनेवालोंके लिअे भी अुतनी ही बड़ी चेतावनी है, क्योंकि अुसका भी यही नतीजा होगा; यह विचार शैक्षणिक दृष्टिसे और भारतके संविधानकी भावना तथा अुसकी अेकताकी दृष्टिसे बिलकुल गलत है।

अन्तमें अेक बात और: मैंने कहा है कि अंग्रेजी तीसरी भाषा होगी। अिसका कारण यह है कि अपनी भाषाओंके जरिये पढ़ाते हुअे भी अंग्रेजी पुस्तकोंका अुपयोग करना हमारे लिअे जरूरी होगा। अिससे तुरन्त प्रादेशिक भाषाओंकी अुपयुक्त पुस्तकोंके अभावकी प्रारंभिक कठिनाअी दूर हो जायगी। अन्तमें युनिवर्सिटियोंमें अुपयोग करनेके लिअे न केवल हमारी अपनी भाषाओंमें बल्कि हिन्दीमें भी पाठ्यपुस्तकें तैयार हो जायंगी। अंग्रेजीकी पुस्तकें भी रहेंगी।

अिस विचारसे युनिवर्सिटियोंमें कार्यक्षमता, स्तर वगैराकी हानि अुठाये बिना माध्यम-परिवर्तनकी दिशामें बढ़नेका अुत्साह और साहस पैदा होना चाहिये। अुलटे, अपनी भाषाका माध्यम होनेसे तो विद्यार्थी ज्यादा अच्छा और ज्यादा जल्दी सीखेंगे। और अगर शिक्षणकी तथा सामूहिक चर्चा-मंडलों (सेमिनार) की अुपयुक्त पद्धतियां अपनाअी जायं और पुस्तकालयोंके अुपयोगको बढ़ाया और प्रोत्साहित किया जाय, तो अिस बारेमें हम निश्चित रह सकते हैं कि माध्यम-परिवर्तनसे युनिवर्सिटीका शिक्षण और अनुशासन जरूर सुधरेगा। जरूरत केवल अिस बातकी है कि हम अपनी भाषाओंकी प्रगति और विकासकी शक्तिमें, यानी अपने-आपमें, श्रद्धा रखें और हमारे सारे प्राध्यापकों और विद्वानोंके संयुक्त प्रयत्नके रूपमें आजकी युनिवर्सिटियोंमें से, जिन्होंने विदेशी शासन और अुसकी भाषा अंग्रेजीके कारण अेक संकुचित और अत्यन्त सीमित वर्ग-प्रवृत्तिका रूप ले लिया है, सच्ची लोक-युनिवर्सिटियोंका निर्माण करनेके भगीरथ कार्यमें लग जायं।

८-२-'५६
(अंग्रेजीसे)

भगनभाई देसाई

www.vinoba.in

अंबर चरखा क्या है?

[ता० ११-२-'५६ के अंकके अनुसंधानमें।]

३

अम्बर चरखेके साथ जुड़े हुअे दूसरे औजार

२३. जैसा कि हम अूपर कह चुके हैं, अंबर चरखे पर कताअी करनेके लिअे सूतके नंबरके अनुसार अलग अलग मोटाअीकी नलीदार पूनियोंकी जरूरत होती है। ये पूनियां बनानेके लिअे तथा अुनके लिअे जरूरी रूअी धुननेके लिअे लकड़ीके धुनने और पूनी बनानेके औजार भी तैयार किये गये हैं।

(क) धुनाअी मोढ़िया

२४. धुनाअी मोढ़िया अेक लकड़ीके पहिये और अुसके साथ सूतकी मालसे जुड़े हुअे अेक दांतोंवाले चक्रका बना होता है। यह चक्र लगभग ३ अिंच लंबे और ⅝ अिंच व्यासवाले अेक धारीदार रोलरको घुमाता है। यह धारीदार रोलर धुनी हुअी रूअीको २ अिंच व्यासके लगभग ३ अिंच चौड़े लकड़ीके सिलेन्डर पर पहुंचा देता है। अिस सिलेन्डर पर टीनकी कीलियां जड़ी होती हैं। धारीदार रोलर और लकड़ीका सिलेन्डर, कचरा निकल जानेके लिअे पेंदेमें रखी गअी खुली जगहको छोड़कर, अेक-दूसरेके साथ जुड़े होते हैं। लकड़ीके सिलेन्डरके साथ तारका अेक छोटासा पिंजरा होता है, जो ६ अिंच चौड़ा, १८ अिंच लंबा और ८ अिंच अूंचा होता है। मुख्य पहिया जब चलाया जाता है तब सिलेन्डर बहुत तेजीसे घूमता है। बाहरकी ओर धकेलनेवाले बलके जोरसे रूअीके रेशे पिंजरेमें जा कर गिरते हैं। पेटीके साथ धुनाअी मोढ़ियेकी कीमत लगभग ३५ रुपये कूती गअी है।

(ख) बेलनी

२५. रूअीके ढीले और खुले हुअे रेशे धुनाअी मोढ़ियेके साथ जुड़े हुअे तारके पिंजरेमें अिकट्ठे होते हैं। अुन रेशोंको पिंजरेमें से निकालकर बेलनी पर नलीदार पूनियां बनाअी जाती हैं। बेलनी अेक खास तौर पर बनाया गया लकड़ीका औजार है। अुसकी लंबाअी, चौड़ाअी और अूंचाअी अंबर चरखे जैसी ही होती है। अुसमें करीब ७ अिंच लंबे और ⅝ अिंच व्यासके दो लोहेके रोलरोंकी जोड़ होती है, जिनके साथ स्प्रिंग लगी होती है। नीचेके रोलर धारीदार होते हैं और अूपरके रोलरों पर रबर चिपका हुआ रहता है। खुले हुअे रेशोंको अिन रोलरोंमें से चार-पांच बार निकाला जाता है और बादमें अेक नली द्वारा अुनकी नलीदार पूनियां बनकर अेक छोटेसे टीनके सिलेन्डरमें अिकट्ठी होती हैं। यह टीनका सिलेन्डर ८ अिंच अूंचा और ५ अिंच व्यासका होता है। अिसके बीचके भागमें अेक रिंग लगाअी होती है। हाथसे घुमाये जानेवाले मुख्य चक्रके साथ मालसे जुड़े हुअे दांतोंवाले चक्रके जरिये यह सिलेन्डर घूमता है। सिलेन्डरके घूमनेसे पूनीको बट चढ़ता है। पूनी बनानेवाले अिस यंत्रको बेलनी कहा जाता है। मुख्यतः वह लकड़ीका बना होता है। अुसका टीनका सिलेन्डर, लोहेके रोलरोंकी दो जोड़ और रबरका कांटेदार पट्टा गांवके सुतार थोड़ी तालीम लेनेके बाद बना सकते हैं और बिगड़ने पर अुन्हें सुधार भी सकते हैं। अुसकी कीमत अंदाजन २५ रुपये है।

२६. अिस तरह अंबर चरखेका सेट धुननेका यंत्र, पूनी बनानेका यंत्र और चरखा अिन तीन चीजोंसे बनता है। और अिन तीनोंकी कीमत अंदाजन १०० रुपये होती है। अिसके अलग अलग भाग चुने हुअे केन्द्रीय कारखानोंमें बनानेका प्रबंध किया जाय तो यह कीमत १० से २० रुपये तक कम हो सकती है, यानी ९० से ८० रुपये तक नीचे अुतर सकती है। अिस प्रकार श्री अेकम्बरनाथन् द्वारा बनाये हुअे असल नमूने परसे तैयार किया गया लकड़ीका चार तकुओंवाला अम्बर चरखा गांधीजीकी लगभग सारी शर्तें पूरी कर देता है।

तुलनात्मक आंकड़े

२७. मौजूदा अंतिम रूप लिये हुअे अंबर चरखे पर काते गये सूतका नंबर, अुसका गुण, मजबूती और समानता वगैराकी जांच करनेके लिअे अलग अलग स्थानोंमें प्रयोग किये गये हैं। वर्धा और नासिकमें किये गये प्रयोग यह बताते हैं कि अिस चरखे पर प्रति घंटे ३।। से ४ गुंडी सूत काता जा सकता है। परंतु अुसका औसत अुत्पादन प्रति घंटे २ गुंडीका है अथवा ८ घंटेके दिनमें २० नंबरका औसतन् १६ गुंडी सूत काता जा सकता है, जब कि मामूली चरखे पर प्रति घंटे औसतन् ½ गुंडी अथवा ८ घंटेके दिनमें १६ नंबरका ३।। गुंडी सूत काता जा सकता है।

२८. अंबर चरखे पर १२ से ४० नंबरका सूत काता जा सकता है। सूतके नंबरका आधार काममें ली जानेवाली रूअीके रेशों पर होता है। वर्धामें गीष्म ऋतुकी १११° गर्मीमें 'बुरी' जातिकी रूअीसे १३० नंबरका सूत काता गया था। अितने ही नंबरका सूत अिस्लामपुरमें भी काता गया था। वर्धा और नासिकमें गर्मीके दिनोंमें — दोनों स्थानों पर गर्मियोंमें हवा गरम और सूखी होती है — जरीला रूअीसे ३२ से ४० नंबरका सूत, सूरती रूअीसे ५२ नंबरका सूत और कानपुरी रूअीसे १२ नंबरका सूत काता गया था। नासिकके केन्द्रीय विद्यालयमें तालीम लेनेवाले अुम्मीदवार आज २० से ५२ नंबर तकका सूत कातते हैं। मंगरोठमें — जहां हाल ही प्रयोगकेन्द्र शुरू किया गया है — ग्रामवासी अंबर चरखे पर औसतन् १६ नंबरका सूत कातते हैं।

२९. अंबर चरखे तथा मामूली चरखे पर काते हुअे सूतका तुलनात्मक विश्लेषण यह बताता है कि अंबर चरखेके सूतकी मजबूती ७० से १०० प्रतिशत जितनी है, जब कि मामूली चरखेके सूतकी मजबूती औसतन् ६० से ७० प्रतिशत होती है। अिस प्रकार सूतकी मात्रा और गुणकी दृष्टिसे अंबर चरखेका सूत मामूली चरखेके सूतसे ज्यादा अच्छा होता है। क्योंकि कातनेवाला अंबर चरखे पर ८ घंटेके दिनमें २० नंबरका औसतन् १६ गुंडी सूत कात सकता है, जब कि मामूली चरखे पर अितने ही समयमें १६ नंबरका सिर्फ ३।। गुंडी सूत कात सकता है।

बुनाअीका अनुभव

अिस प्रकार अंबर चरखेके सूतकी मामूली चरखेके सूतसे की गअी तुलना संतोषजनक है। परंतु अिन दोनों प्रकारोंके सूतकी बुनाअीके बारेमें अैसी तुलनात्मक जानकारी अभी अिकट्ठी नहीं की जा सकी है। खादी-बोर्ड अब अंबर चरखेके सूतकी बुनाअीके संबंधमें जानकारी अिकट्ठी करने तथा खादी बुननेवाले और मिलका सूत बुननेवाले बुनकरोंका अनुभव अिकट्ठा करनेका कार्यक्रम आरंभ करता है। अभी तक जो सीमित अनुभव प्राप्त हुआ है, वह नीचेके कोष्ठकमें दिया जाता है:

स्थान	अर्ज	बुनाअी	सूतका नंबर	गज	समय घंटोंमें
बिलीमोरा	४५"	५०×५०	१९	१५.५	८.५
"	४५"	"	१९	"	९.०८
गुर्लहोसुर	—	रंगीन और डिजाअिनवाली किनारदार साड़ियां	२८	६.०	६.०

अूपर दी गअी जानकारी अिस मान्यताका समर्थन करती है कि अंबर चरखा भारतके परंपरागत विकेन्द्रित सूती कपड़ा-अुद्योगके पुनरुद्धार और विकासकी कुंजी साबित हो सकता है। भारत अेक जमानेमें अुस समयके सभ्य जगत्का सूती कपड़ा बनानेवाला अग्रगण्य देश था।

(अंग्रेजीसे) (संपूर्ण)

पृथ्वी पर प्रेम और करुणाका राज्य

[अमेरिकाकी ओहियो युनिवर्सिटीके प्रोफेसर डॉ० हैराल्ड स्मिथ नलगोंडा जिलेके गरीरेड्डीगुड़म् स्थान पर पिछले रविवार विनोबाजीसे मिले। अुन्होंने भूदानके बारेमें विनोबाजीसे कुछ प्रश्न पूछे। मुलाकातकी पूरी रिपोर्ट नीचे दी जाती है।

— नि० देशपांडे]

प्रश्न १: आपके अिस आन्दोलनके पीछे बुनियादी आध्यात्मिक हेतु क्या है? जिन लोगोंने जमीन दानमें दी है, अुन लोगोंका क्या आध्यात्मिक परिवर्तन हुआ है? या अिसके पीछे प्रतिष्ठाका सवाल अथवा अिज्जतका डर जैसे हेतु रहे हैं?

विनोबाजी: अगर हम दानमें मिली हुअी भूमिको ही देखें, तो अुससे हमें सही कल्पना नहीं होती। लोगोंको जमीनकी भूख है और अुन्हें जमीन देनेसे अुनकी यह भूख शान्त होती है। लेकिन वह हमारी भूख नहीं है, हालांकि हम बेजमीनोंके लिअे जमीन जरूर चाहते हैं। जमीनका सवाल सिर्फ भारतमें ही नहीं है, वह जापान और अेशियाके दूसरे देशोंमें भी मौजूद है। अिसलिअे हमारा मुख्य ध्येय समाजका मौजूदा आधार बदलनेका है। अगर लोगोंका अिस संबंधमें हृदय-परिवर्तन हो जाय, तो हमारा यह ध्येय सिद्ध हो जायगा। अिस आन्दोलनको अिस दृष्टिकोणसे देखने पर मुझे लगता है कि अिसमें मुझे आशातीत सफलता मिली है। यह सच है कि कुछ लोगोंने प्रतिष्ठा प्राप्त करनेके लिअे या परलोकमें पुण्य प्राप्त करनेके अिरादेसे ही जमीन दी है। फिर भी अैसे काफी लोग हैं, जिन्होंने शुद्ध हेतुसे प्रेरित होकर ही जमीन दी है। अिसे मैं आध्यात्मिक परिवर्तन तो नहीं कह सकता, लेकिन अिस बारेमें मुझे कोअी शंका नहीं कि हृदयकी विशालतासे प्रेरित होकर ही अुन्होंने जमीनका दान किया है। और हृदयकी यह विशालता और अुदारता अुनमें पहले से ही मौजूद थी। मैं यह दावा नहीं कर सकता कि हमने लोगोंका आध्यात्मिक परिवर्तन किया है। आध्यात्मिक भूमिका तो यहां पहलेसे ही मौजूद थी। अिसीलिअे लोगोंकी तरफसे हमारी पुकारका यह अुत्तर मिला है। शिक्षाका शाब्दिक अर्थ 'बाहर लाना' है। अिसलिअे जो चीज लोगोंमें पहलेसे ही मौजूद थी, अुसे हम बाहर लाये हैं। अुस हद तक मुझे पूरा संतोष अनुभव होता है।

हम जानते हैं कि आज दुनियाके राष्ट्र कितने भयभित हैं। रूस और अमेरिका अितने शक्तिशाली हैं, लेकिन फिर भी वे अेक-दूसरेसे डरते हैं। छोटे और बड़े दोनों प्रकारके राष्ट्र अेक-दूसरेसे डरते हैं। अिसका कारण क्या है? अिसका कारण यह है कि समाजका सारा आधार ही बिलकुल गलत है। यह होड़वाला समाज है, जिसका आधार 'जिसकी लाठी अुसकी भैंस' का नियम है। हम अुस आधारको बदलना चाहते हैं। हम प्रेम और करुणाका राज्य चाहते हैं। अीसामसीहने अीश्वरके राज्यकी बात कही है। लेकिन 'अीश्वर' शब्द हमारी शक्तिसे परे है। वर्तमान समाजमें भी थोड़ा प्रेम और करुणा तो है, लेकिन हम तो प्रेम और करुणाके राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि प्रेम और करुणा समाजकी मुख्य शक्ति बन जाय। जमीनकी समस्या कानूनसे हल हो सकती है, लेकिन हम अहिंसाकी शक्ति और कानूनकी शक्तिमें भेद करते हैं। कानून हिंसासे भी भिन्न है। वह हिंसा और अहिंसाके बीचमें कहीं आता है। वह अहिंसाके ज्यादा नजदीक आ सकता है। लेकिन लोकशक्ति कानूनकी शक्तिसे भिन्न है। अगर हम अपनी समस्यायें प्रेम और दयासे हल कर सकें, तो अुससे आत्म-शक्ति अुत्पन्न होगी। तब लोगोंकी श्रद्धा अुसमें जम सकेगी। हम कहते हैं कि हममें श्रद्धा है और मंदिर, मस्जिद या गिरजेमें जाते हैं, लेकिन हमारे हृदयकी गहराअीमें वह श्रद्धा नहीं होती जिसने प्राचीन कालके आध्यात्मिक धर्मोपदेशकोंको प्रेरणा दी थी। अिसका कारण यह है कि समाजकी सारी रचना ही गलत है। आज भलाअीमें श्रद्धा पैदा होनेकी और परस्पर विश्वासकी जरूरत है। लोग संयुक्त राष्ट्रसंघमें अेक-दूसरेके साथ चर्चा

www.vinoba.in

करनेके लिअे बैठते तो हैं, लेकिन अेक-दूसरेका विश्वास नहीं करते। यह अच्छी बात है कि वे अेक साथ मिलते हैं और चर्चा करते हैं, और धीरे-धीरे अुनमें परिस्थितियोंके जोरसे आपसी विश्वास भी पैदा होगा। लेकिन आज तो दोनों दल शस्त्रास्त्र बढ़ाते ही जा रहे हैं। अैसा लगता है कि अब दोनों थक गये हैं। हमारा नम्र प्रयत्न अैसी शक्ति पैदा करनेका है, जिससे समाजमें श्रद्धा और विश्वास अुत्पन्न हो। अिसीलिअे मैं कहता हूं कि प्रत्येक भूदान विश्वशांतिके लिअे अेक वोट है।

प्रश्न २: आज अिस आन्दोलनके तात्कालिक और दीर्घ-कालिक अुद्देश्य क्या हैं?

विनोबाजी: जहां तक तात्कालिक अुद्देश्यका संबंध है, अगर बेजमीनोंके लिअे काफी जमीन दी जाय तो मुझे संतोष हो जायगा। भारतमें कुल ३० करोड़ अेकड़ जमीनमें खेती होती है, जिसमें से मैं ५ करोड़ अेकड़की मांग करता हूं — यानी कुल जमीनका छठा भाग मांगता हूं। भारतमें ५ करोड़ लोग बेजमीन हैं। मेरी दलील बिलकुल सादी है। आम तौर पर अेक परिवारमें पांच आदमी होते हैं, अिसलिअे मैं कहता हूं कि मुझे परिवारका छठा सदस्य मान लो और मुझे अपना हिस्सा दो। पांच पांडवोंकी भी अेक पौराणिक कथा है, जिनका अेक छठा भाअी था; लेकिन अुसे अुन्होंने भुला दिया, जिसका नतीजा महाभारतके बड़े युद्धमें आया। अिसलिअे मैं लोगोंसे कहता हूं कि अगर आप अुस छठे भाअीको — समाजके गरीब लोगोंको — नहीं पहचानेंगे तो कठिनाअी पैदा होगी। अिसलिअे जमीनका छठा भाग प्राप्त करना मेरा तात्कालिक अुद्देश्य है।

प्रश्न ३: जब समग्र ग्रामदान दिये जाते हैं, तब जरूरतके मुताबिक जमीनोंका फिरसे बंटवारा किया जायगा, या व्यक्तिगत मालकियत न रखते हुअे अुन पर सहकारी ढंगसे खेती की जायगी?

विनोबाजी: दोनों बातें साथ साथ की जायंगी। जरूरतके मुताबिक जमीनका बंटवारा किया जायगा, लेकिन अुस पर किसीकी मालकियत नहीं रहेगी। जमीन पर सामूहिक खेती नहीं होगी, बल्कि सहकारी खेती होगी। सारे परिवारोंकी जरूरतके मुताबिक जमीनका फिरसे बंटवारा हो जानेके बाद, अैसी कुछ जमीन बचेगी जिसका समान प्रयोजनोंके लिअे अुपयोग किया जायगा। अिससे लोगोंको सहकारकी तालीम भी मिलेगी। हर दस या पन्द्रह साल बाद जरूरतके मुताबिक जमीनका फिरसे बंटवारा किया जायगा। अिसलिअे जमीनकी व्यक्तिगत मालकियत तो नहीं रहेगी, लेकिन काम करने और सहकार करनेके लिअे व्यक्तिगत हेतु जरूर रहेगा। . . . मैं लोगोंसे हमेशा कहता रहता हूं कि पानी और हवाकी तरह जमीन भी भगवानकी मुफ्त देन है, अिसलिअे अुसका मालिक भी केवल अीश्वर ही है। हमारा अंतिम ध्येय यह है कि गांवकी जमीनका प्रबंध ग्रामसमाज द्वारा होना चाहिये।

प्रश्न ४: भूदान आन्दोलन और गांवोंके लिअे कम्युनिटी प्रोजेक्टकी व्यवस्थित योजनाके बीच क्या संबंध है?

विनोबाजी: कम्युनिटी योजनाओंने अभी तक जमीनका सवाल हाथमें नहीं लिया है। शायद यह काम अुन्होंने मेरे लिअे छोड़ रखा है! अुनका मुख्य ध्येय अुत्पादन बढ़ाना है, जो कि हमारा भी अेक ध्येय है। लेकिन हम अुत्पादनकी वृद्धिके साथ समान वितरण भी चाहते हैं। मैं अिस रायको नहीं मानता कि अुत्पादनका पहला स्थान है और वितरणका अुसके बाद आता है। मेरे विचारसे दोनों साथ साथ चलने चाहिये; क्योंकि वे अेक-दूसरेसे बिलकुल अलग नहीं हैं, बल्कि अेक-दूसरेके साथ मिले हुअे हैं। बेजमीन आदमीको अुत्पादनकी कोअी प्रेरणा नहीं मिलती। आज लोग अपने-आपमें विश्वास खो बैठे हैं। हमने स्वराज्य प्राप्त कर लिया है, लेकिन बेजमीनोंको अुसका अनुभव नहीं होता। थोड़ा परिवर्तन तो हुआ है, लेकिन अितना नहीं कि अुनमें श्रद्धा और विश्वास पैदा हो सके। अिसलिअे अगर अुन्हें जमीन दी जाय तो अुन्हें भी समाजमें दूसरे नागरिकोंको बराबरीका दर्जा और प्रतिष्ठा प्राप्त हो जायगी।

हमारा बुनियादी सिद्धान्त यह है कि जहां तक संभव हो हरअेकको खेतमें थोड़ा काम करना चाहिये। खेती-कामसे अच्छी कसरत हो जाती है और प्रकृतिसे हमारा संपर्क बना रहता है, जो दैवी संपर्क है। मैं जानता हूं कि आधुनिक समाजमें यह संभव नहीं है। लेकिन आदर्श समाजमें हर आदमी रोज थोड़े समयके लिअे खेतमें काम करेगा। खेतमें किये जानेवाले परिश्रमको मैं अीश्वरकी भक्ति मानता हूं। मैंने वर्षों तक खेतमें परिश्रम किया है और अुसमें मुझे अीश्वरके अस्तित्वका अैसा अनुभव हुआ है, जैसा मंदिरमें भी नहीं हुआ।

प्रश्न ५: क्या भूदान आन्दोलनमें किसानको टेकनिकल मदद और मार्गदर्शन देनेकी कल्पना है, ताकि वह अपने खेती-कामको ज्यादा अुन्नत बना सके?

विनोबाजी: भारत अत्यन्त प्राचीन कालसे खेती करता आ रहा है और हमारे किसान अपढ़ होते हुअे भी अनुभवी हैं। फिर भी मार्गदर्शन, पद्धतियोंमें सुधार वगैरा करना जरूरी है। हम अुड़ीसाके कोरापुट जिलेमें यह करनेवाले हैं, जहां ६०० से अधिक गांव दानमें मिले हैं। अुसके लिअे निष्णातोंकी मददकी जरूरत है। लेकिन मुझे भय है कि कालेजोंमें पढ़नेवाले ये निष्णात सामान्यतः अमेरिका और रूससे सीखना चाहते हैं, जिनके पास काफी जमीन और कम लोग हैं — प्रति मनुष्य १२ से १५ अेकड़ तक जमीन है। हमारी समस्यायें बिलकुल अलग हैं। हमारे यहां जमीन कम है और लोग ज्यादा हैं — प्रति मनुष्य १ अेकड़ जमीन है। अिसलिअे हमें चीनी और जापानी तरीकोंका अनुसरण करना होगा। आम तौर पर हमें अैसे लोगोंसे सलाह नहीं मिलती, जो भारतीय परिस्थितियोंके अध्ययन और अनुभवसे निष्णात बने हों।*

(अंग्रेजीसे)

यह विकास — आगे या सदा पीछेकी ओर?

भारतमें अंग्रेजी राजका सबसे बड़ा कमाल यह था कि अुसने हमारे दिमाग पर काबू पा लिया था। हमारे अन्दर अंग्रेजियतके लिअे अितनी महत्त्वाकांक्षा पैदा हो गअी कि हम हर बातमें अंग्रेजकी रीस करने लगे। आजादीके बाद अिस मनोवृत्तिमें कुछ फरक पड़ा है। लेकिन अिन दिनों हम अेक नये रोगके शिकार हो गये हैं — 'बैकवर्डनेस' (पिछड़ापन)। युरोप या अमरीकासे जो कोअी भी आता है वह बड़ी हमदर्दीके साथ यह कहता है कि आप पिछड़े हुअे हैं, आपको दूसरे देशोंकी तरह आगे आना चाहिये। अिसके लिअे विदेशी व्यापारी और सरकारें हमारी मदद भी बड़े जोरशोरसे कर रही हैं। अिस अनोखी घटनाका नतीजा यह है कि आज स्वतंत्र भारतमें जितना विदेशी माल-सामान और विदेशी पूंजी है अुतनी अंग्रेजी राजके जमानेमें भी नहीं थी!

जरा देखनेकी बात है कि अिस आगे होने या पिछड़े हुअे होनेका मतलब क्या है। अमरीकाकी मिसाल लें। वहां पर प्रति व्यक्ति दूध, मक्खन और रोटीकी खपत हमारे यहांसे कहीं ज्यादा है। अिसी प्रकार तम्बाकू, चा, शराब, कागज, मोटर, रेडियो, हथियारों आदिकी भी। साथ ही साथ वहांकी आबादीमें फी सैकड़ा रोगी लोग — विशेषकर पागलपन और सुजाक आदि अिन्द्रिय-जनित दोष — भी हमारे यहांसे ज्यादा हैं। वहां पर तलाक, आत्म-हत्या, खून-कतल और रोड-दुर्घटनाओंकी मात्रा भी हमारे यहांसे बढ़ी-चढ़ी है। नतीजा यह है कि वहां पर डाक्टर, पुलिस, वकील आदि भी हमारे यहांसे ज्यादा हैं। स्पष्ट है कि ज्यादा

* ता० ३१-१-'५६ के 'भूदान' से।

www.vinoba.in

दूध, मक्खन और रोटी खाना स्वास्थ्यकी निशानी है। लेकिन क्या यह कहा जा सकता है कि ज्यादा तम्बाकू अिस्तेमाल करनेसे चिन्तन-शक्ति बढ़ती है या ज्यादा कागज खर्च करनेसे बौद्धिक स्तर अूंचा अुठ जाता है? या ज्यादा मोटर-सवारीसे टांगें मजबूत हो जाती हैं या रेडियो-श्रवणसे संस्कृति-सुधार होता है? अिन सवालोंके जवाबमें मतभेद हो सकते हैं, लेकिन अिससे तो कोअी अिन्कार नहीं कर सकता कि ज्यादा हथियार रखने पर भी अमरीकावाले अुन लोगोंसे ज्यादा निडर और शांति-प्रिय नहीं बन सके जो हथियार अुतने नहीं रखते थे। अिसलिअे यह कहा जा सकता है कि 'पिछड़ा होना' अेक सापेक्ष शब्द है और जो आगे माने जाते हैं वे भी कुछ मामलोंमें अुनसे पिछड़े हुअे हो सकते हैं जो 'पिछड़े' माने जाते हैं।

अिसलिअे किन पहलुओंमें कोअी आगे है और किनमें पीछे, अिसमें समझदारीसे तमीज करना चाहिये। हम जो 'पिछड़े' कह कर बदनाम किये जाते हैं वे भी बहुतसे मामलोंमें काफी आगे हैं। और अक्ल सहज ही यह बताती है कि जिन चीजोंमें हम आगे हैं अुनमें हमें आगे रहना चाहिये। और अुन बातोंमें आगे बढ़नेकी कोशिश करनी चाहिये जिनमें हम अपनी समझसे पिछड़े हुअे हैं।

लेकिन नव-भारत निर्माणके लिअे हमारे योजना-कमीशनके विशेषज्ञोंने कौनसा रास्ता पसन्द किया है? अुनके अूपर तो मानो पिछड़ेपनका भूत सवार है और अिसलिअे वे अमरीकी या युरोपियन नमूनेकी हू-बहू नकल अुतारना चाहते हैं। वरना अुनको अितनी बड़ी तादादमें विदेशी विशेषज्ञ, पूंजी और मालकी दरकार क्यों होती? जैसा हमारे प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर चंद्रशेखर वेन्कट रमनने अेक दिन कहा कि सिवाय मिनिस्टरोंके बाकी सब चीज ही यहां विदेशसे मंगाअी जाती है। हमारे यहां जो रचनायें, संगठन या कारखाने खड़े किये गये हैं वे सब पश्चिमी नमूने पर। हमारे प्रधानमंत्रीने अिस संबंधमें हाल ही में साफ साफ अपनी राय भी जाहिर की:

> 'मैं नहीं समझता कि किसी जोरदार तरीकेसे हम बढ़ सकेंगे, अगर हम भारी अुद्योग बड़े पैमाने पर नहीं चलायें और नयेसे नये अुपाय नहीं अख्तियार करें। बड़े पैमानेसे मेरा मतलब बड़े बड़े कारखाने ही नहीं बल्कि ज्यादा विशाल क्षेत्रसे भी है। अगर हमें लोहे और अिस्पातके कारखाने बढ़ाने हैं तो वे नयेसे नये नमूनेके रखना होंगे। अगर हम अिन्जिन बनानेका कारखाना खोलते हैं तो वह नयेसे नये नमूनेका होना चाहिये। जिस किसी भी तरहके कारखाने हमारे यहां हो — सिमेन्टके, विलायती खादके, फौजी सामानके या सबसे बुनियादी और सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण मशीनें बनानेके — वे सबके सब नयेसे नये नमूनेके होने चाहिये। गये-बीते नमूने रखकर हम न दूसरोंका मुकाबला कर सकते हैं और न जितना हम जरूरी समझते हैं अुतना अुनसे पैदा कर सकते हैं।'

अिससे हमारी विकास-नीतिका गुर मिल जाता है। लेकिन यह तो मानना ही पड़ेगा कि हिन्दुस्तानके पास आज अुतने बुलन्द और जबरदस्त आर्थिक साधन नहीं हैं जो अमरीका या दूसरे बड़े देशोंके पास हैं। अिसलिअे हर जो नमूना अमरीका चलाये वह हम नहीं चला सकते। मतलब यह है कि नयेसे नये नमूनोंकी दौड़में आखिरी हाथ हमेशा विदेशियोंका रहेगा और जो नमूना वे कल ठुकरा देंगे अुसे हम आज अपनायेंगे, जो वे आज अपनायेंगे अुसे हम कल अपनायेंगे और तब तक अुन्होंने दूसरा बना लिया होगा। अिसका मतलब यह है कि हमारे विकासकी बागडोर विदेशियोंके हाथमें होगी और हम आंकड़ोंकी दृष्टिसे तो जरूर आगे दीखेंगे, लेकिन वैसे **सदा पीछे** ही रहेंगे।

देशमें आज जो योजना-पद्धति चल रही है, अुसके अिस पहलू पर गंभीरतासे विचार करना होगा। यह कैसी दुःखद बात है कि अिस ढंगसे हम कितना ही आगे क्यों न बढ़ जायें, लेकिन सदा पीछे ही रहेंगे। अिसका अिलाज हमें सोचना होगा।

अिस जंजालसे बचनेके दो ही रास्ते हैं। या तो हम अपनी रफ्तार और भी तेज कर दें और अपने हरीफोंसे आगे निकल जायें। लेकिन अुसके अन्दर दिक्कत यह है कि हमारे पास अुतना ज्यादा पैसा नहीं जितना हमारे जोड़ीदारोंके पास है। अिसलिअे अुनकी हरीफाअी कर करके अुनसे बाजी मार ले जाना असंभव है। तब दूसरा रास्ता यह है कि हम घूम पड़ें और अपनी दिशा ही बदल दें। फिर अपने तरीकेसे चलें। तब यह होगा कि हम आगे बढ़ जायेंगे और अभिक्रम (initiative) भी हमारे हाथ रहेगा। अितिहासज्ञ बताते हैं कि संसारकी गति चक्राकार होती है। चक्रमें दिशा बदलनेसे आगेवाले पीछे हो जाते हैं और पीछेवाले आगे। अिस रीतिसे अितिहासमें कअी राष्ट्र आगे बढ़ गये हैं और अुन्होंने दूसरोंको पीछे फेंक दिया है।

लेकिन सवाल यह है कि दिशा कैसे बदली जाये? दिशा बदलनेके माने यह हैं कि जिन मान्यताओं, आधारों और मूल्यों पर हमारे हरीफ चल रहे हों अुन्हें हम अेकदम त्याग दें और नयी मान्यताओं, आधारों और मूल्यों पर चलें। हमारे हरीफोंके मूल्य संक्षेपमें अिस प्रकार हैं:

(१) संपत्ति या अुत्पादनके साधनों पर निजी या सरकारी मालकियत।

(२) शारीरिक श्रमको हीन और मानसिक श्रमको अूंचा मानना और दोनोंके प्रकारमें जमीन आसमानका भेद।

(३) स्वरक्षामें हथियारोंका अुपयोग।

(४) समाजके अन्दर वर्ग-भेद और वर्ग-विद्वेषकी स्थापना।

(५) जिसकी लाठी अुसकी भैंस — अिक्यावनके हितमें अुनचासके हितकी बलि देना।

अगर ये मान्यतायें समयके चपेटोंको सही-सलामत बर्दाश्त कर लेतीं तब तो अिनके बदलनेकी कोअी जरूरत अुठती ही नहीं। लेकिन दो महायुद्धोंने और तीसरेके संकटने अिन मूल्योंका खोखलापन स्पष्ट जाहिर कर दिया है। फिर, आज तो जो तीन सबसे बड़े और आगे बढ़े हुअे राष्ट्र माने जाते हैं (अमरीका, अिंग्लैण्ड और रूस) अुन सबमें आर्थिक विषमतायें मौजूद हैं। और साधारण आदमीकी लोकशाही क्या, मजदूरोंका राज क्या — दोनों ही गुलाबी कल्पनायें मात्र हैं। अिनकी आधी-पूरी नकल करते हुअे, हिन्दुस्तान पिछले आठ बरसमें जो चला अुसका नतीजा यह हुआ कि यहां बेकारी बढ़ी, जातपांतका जहर बढ़ा, चोरी-डकैती बढ़ी, स्त्रियोंका व्यापार बढ़ा और दूसरे पाप-कर्म बढ़े। साथ ही साथ, गरीब और अमीरके बीचकी खाअी भी और ज्यादा चौड़ी हो गअी। कहनेकी जरूरत नहीं कि अगर आंख बन्द करके हम अिसी तरह अिन मान्यताओंसे चिपटे रहेंगे, तो अनहोनी बातें सुनने-देखनेको मिलेंगी और हमारा जीवन कहीं ज्यादा कलुषित हो जायेगा। यों सरकारी आंकड़ोंके अनुसार हम बढ़े हुअे भले दीखें, लेकिन आपसी कलह बढ़ेगा, समाजका ताना-बाना अुखड़ेगा। अिन आधारों और मूल्यों पर हजार योजनायें चलाकर भी हम अपने देशकी गरीबी दूर नहीं कर सकेंगे, ठीक अुस तरह जिस तरह सोख्ता कागजकी हजारों गांठें हिन्द महासागरमें डालकर भी अुसके पानीको नहीं सुखाया जा सकता।

अुपर्युक्त मान्यताओंकी बहार खतम हो चुकी। अुनके दिन चले गये। युरोपका दुबला मुंह और अमरीकाका भयभीत चेहरा

www.vinoba.in

यह कह रहा है कि अिनके जैसी भूलमें हम न पड़ें। फिर, विज्ञान भी सिंहनादकी तरह गर्जन कर रहा है कि हथियारों या हिंसक साधनोंसे या युद्धसे समस्यायें हल होनेके बजाय और ज्यादा जटिल हो जाती हैं। अुनसे डर और अविश्वास पैदा होते हैं। और अिन दोनोंकी जड़में है निजी मालकियत। मालकियत यानी संग्रह और डर दोनोंका चोली-दामनका साथ है। आज विज्ञानका अेक ही संदेश है — असंग्रह यानी अुत्पादनके साधनों पर न व्यक्तिकी मालकियत रहे, न सरकारकी, बल्कि समाजकी। अिसी तरहसे, शारीरिक और मानसिक श्रमोंके बीच दीवार आज खड़ी नहीं रह सकती। दोनों ही हरअेकके लिअे जरूरी हैं, जिस तरह हाथ-पैर और सिर जरूरी हैं। शारीरिक श्रमको हेय समझना मानों अपने हाथ-पैर काट डालना है।

निकट भविष्यमें पहली पंचवर्षीय योजना खतम होने जा रही है। दूसरीके संयोजन पर विचार किया जा रहा है। हमारा निवेदन है कि अैसे समय हम जरा हिम्मत दिखायें और पुरानी परंपराओं या विकासकी रूढ़ियोंमें अपनेको न खो देवें। याद रहे कि हम मशीनोंके अुपयोगके विरोधी नहीं हैं। सच तो यह है कि आज तक कोअी अैसी समर्थ मशीनका आविष्कार नहीं हुआ जिसका हम द्वेष करें। लेकिन मशीन पर नियंत्रण हमारा होगा, न कि अुसका हमारे अूपर। और न अिसका यही आशय है कि हम सादगीके अुपासक हैं। थोड़े दिन हुअे, शांतिनिकेतनमें बोलते समय, सरदार पणिक्करने सादगीका मजाक अुड़ाया था। सादगी कौन चाहता है? हमें हर तरहकी शान और चमक-दमक पसंद है — बशर्ते कि अुससे शोषण न होता हो, असमान वितरण न होता हो, और जीवनमें कृत्रिमता न आती हो। कौन नहीं जानता कि भारतमें विज्ञान व मशीनरीका जो अुच्छृंखल विकास हुआ अुससे करोड़ोंकी रोजी छीनी गअी है और संपत्ति या सत्ता थोड़े या चंद लोगोंके हाथमें आती चली गअी है। हर तरहकी वैज्ञानिक खोज और हर मशीनरी हमें सिर आंखों पर कबूल है — लेकिन शर्त यही है कि वह हमारे देशके दुखिया और भुखियाकी आहको मिटा सके, अुन्हें दो कौर दाना-पानी दे सके और अुन्हें अपने पैरों पर सिर अूंचा करके खड़ा कर सके। लेकिन कोअी भी मशीनरी — चाहे वह कितनी ही बेहतरीन क्यों न हो — हमारे लिअे निकम्मी है अगर वह चंद लोगोंके हाथकी रखैल बनकर करोड़ोंको लूटने और मिटानेका साधन हो जाती है।

अिसलिअे हमें सावधान हो जाना चाहिये। विकासके नाम पर हम अपनेको भूल-भूलैयोंमें न डालें। यह जरूरी है कि हम दूसरोंके अनुभवसे पाठ ग्रहण करें। लेकिन हम अपनी अक्ल साबित रखें। हममें इतनी समझ होनी चाहिये कि जिन मान्यताओंने युरोपको बहकावेमें डाल दिया, अुन्हें छोड़कर हम अपना रास्ता नअी मान्यताओं और नये आदर्शों पर बनायें। हम बेधड़क होकर तेजसे तेज घोड़े (विज्ञान) पर सवार हो जायें, लेकिन अितना ध्यान रखें कि अुसकी लगाम (यानी अपनी बुद्धि) अपने ही हाथमें रहे।

सुरेश रामभाअी

भूदान-यज्ञ

विनोबा भावे

कीमत १–४–० डाकखर्च ०–५–०

ग्रामसेवाके दस कार्यक्रम

[तीसरी आवृत्ति]

लेखक : जुगतराम दवे; अनु० रामनारायण चौधरी

कीमत १–४–० डाकखर्च ०–५–०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४

शक्करके कारखाने क्यों बढ़ाये जायं?

आम तौर पर यह माना जाता है कि यंत्रोंकी मददसे पैदा होनेवाला माल हाथ या सादे साधनोंसे पैदा होनेवाले मालके बनिस्बत सस्ता होता है। परंतु अिस मुद्दे पर गहरा विचार करना चाहिये।

यंत्रोंको चलानेमें मनुष्यको जिलानेके बजाय कम खर्च करना होता है, अिसलिअे स्वभावतः यह माना जाता है कि यंत्रोंका माल सस्ता पड़ना चाहिये। परंतु कअी बार अिससे अुलटा अनुभव भी होता है। शक्करके मामलेमें अैसा ही होता है।

अेक टन गुड़का भाव रु० ३२० के आसपास होता है, जब कि अेक टन शक्करका भाव रु० ८०० के आसपास होता है। शक्कर अधिकतर कारखानोंमें यंत्रोंसे बनती है, जब कि गुड़ सादे साधनोंसे विकेन्द्रित पद्धति पर बनता है। फिर भी शक्कर महंगी क्यों पड़ती है?

अिस प्रश्न पर विचार करनेके लिअे अेक भाअीने नीचेके आंकड़े दिये हैं:

१. पांच टन शक्करकी कीमत रु० ४००० होती है, जिसमें से गन्ना पैदा करनेवाले किसानोंको लगभग रु० १५०० मिलते हैं और रु० ५०० वाहन-खर्चमें जाते हैं। बाकी रु० २००० यानी ५० प्रतिशत कारखानेदारको मिलते हैं।

२. पांच टन गुड़की कीमत रु० १६०० होती है। अिसमें से गन्ना पैदा करनेवाले किसानोंको लगभग रु० १००० मिलते हैं और वाहन-खर्च नहीं जैसा ही होता है। और बाकीके रु० ६०० यानी ३७½ प्रतिशत गुड़के अुत्पादकको मिलते हैं।

कारखानेदारको मिलनेवाले ५० प्रतिशत रुपये शहरोंमें, यंत्रोंमें तथा कमीशन वगैरामें खर्च होते हैं, जब कि गुड़वालेको मिलनेवाले ३७½ प्रतिशत रुपये गांवोंमें बंटते हैं।

गुड़का अेक यह भी लाभ है कि आहारकी दृष्टिसे वह शक्करके बनिस्बत शरीरके लिअे ज्यादा मुफीद होता है; और सस्ता तो वह होता ही है। फिर भी अच्छी दिखनेवाली महंगी शक्करका ही लोग अुपयोग करते हैं, यह मौजूदा जमानेकी बलिहारी है! नतीजा यह है कि लोगोंकी तन्दुरुस्तीको नुकसान पहुंचता है तथा गांवोंका धन और धंधा घटता है। यह हुआ शक्करके यंत्रोंका लेखा! यंत्रोंमें पैसे लगाने पर भी माल सस्ता नहीं मिलता और वह लोगोंके पेटको बिगाड़ता है। तो फिर अैसे कारखाने बढ़ानेकी क्या जरूरत?

(गुजरातीसे)

वि०

विषय–सूची

		पृष्ठ
ग्राहकोंसे	जीवणजी डा० देसाअी	४०९
आचार्य नरेन्द्रदेवजी	मगनभाअी देसाअी	४०९
भारतका विश्वकार्य	विनोबा	४१०
आखिरी अंक	मगनभाअी देसाअी	४१२
मद्रास युनिवर्सिटीका माध्यम	मगनभाअी देसाअी	४१३
अम्बर चरखा क्या है? — ३		४१४
पृथ्वी पर प्रेम और करुणाका राज्य		४१५
यह विकास — आगे या सदा पीछेकी ओर?	सुरेश रामभाअी	४१६
शक्करके कारखाने क्यों बढ़ाये जायं?	वि०	४१८
सूची : भाग १९ (१९५५–'५६)		(४१८ क) १

www.vinoba.in